04 शिक्षा में खेल : चाहिए नीतिगत फोकस और एक मिशनरी जोश

ऋषिकेश

हमारी इस प्यारी धरती पर दो देश सौ करोड़ से अधिक की आबादी वाले देश हैं। इनमें से एक तो खेलों की महाशक्ति बन गया, जबकि दूसरा इस सूची में नीचे से पहले नम्बर पर है। बीसवीं सदी के मध्य में ये दोनों एक दिलचस्प मोड़ पर खड़े थे। उधर चीन में 1949 के निर्णायक क्षणों में एक गृहयुद्ध का अन्त होकर पीपुल्स रिपब्लिक ऑफ चाइना का उदय हुआ था; इधर भारत को 200 साल के ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्ति मिली थी और लोकतान्त्रिक भारतीय गणराज्य की स्थापना हुई थी। यहाँ से दोनों अपने–अपने रास्ते चले – चीन चला कॉमरेड माओ की साम्यवादी राह पर और भारत ने पकड़ी लोकतान्त्रिक समाजवाद की डगर। वक्त के उस मुकाम पर, ये दोनों मुल्क विभिन्न सूचकांकों के हिसाब से करीब–करीब एक ही पायदान पर खड़े थे; खेल में भी, खेलों के अलावा भी। असल में तो तथ्यों[1] पर चलें तो कई मसलों में भारत चीन से आगे ही था, कुछ–कुछ। और चीन चूँकि तब बाकी सारी दुनिया के लिए एक 'बन्द' देश था, सो अन्तर्राष्ट्रीय पटल पर भी चीन इतना पहचाना नहीं जाता था जितना कि भारत।

अन्तर्राष्ट्रीय खेलों के मैदान में इन दो देशों के बीच का अन्तर इससे अधिक क्या हो सकता था कि एक ओर जहाँ भारत[2] 1920 से लगातार ओलिम्पिक खेलों में भाग लेता आया है, वहीं उसमें चीन की शिरकत का दौर सन् 1984 में जाकर शुरू हो पाया। यानी कि 2008 के उन खेलों से बस कुछ 25 बरस पहले, जिनकी मेजबानी चीन ने की थी। लेकिन असल फर्क तो यहाँ है – केवल 9 ओलिम्पिक्स में भाग लेकर चीन 385 पदकों की शानदार उपलब्धि हासिल कर चुका है, जबकि भारत अब तक 23 ओलिम्पिक खेलों में शामिल हुआ, लेकिन उसके हाथ लगे बस 20 पदक! सन् 2008 के खेलों में चीन ने बनाया पदकों का एक शतक जिसमें 51 स्वर्ण पदक थे, जबकि भारत ने केवल 3 स्वर्ण पदक जीते। इनमें व्यक्तिगत प्रतियोगिता में किसी भारतीय खिलाड़ी द्वारा जीता गया पहला–पहला स्वर्ण पदक भी शामिल है। 1996 के खेलों में चीन चौथी पायदान पर था, 2000 के ओलिम्पिक्स में तीसरे स्थान पर, 2004 में दूसरे स्थान पर और सन् 2008 में वह खेलों का मेजबान था तो पदकों का सरताज भी। जबकि इसके उलट, साल 1996 और 2000 के खेलों में भारत रहा 71वें स्थान पर, और इन खेलों के अगले दो संस्करणों में क्रमशः 65वें और 50वें स्थान पर।[3]

इस तुलना को चीन जैसी व्यवस्था लागू किए जाने के हक में दिए जाने वाले तर्क के रूप में न देखा जाए, फिर चाहे वह व्यवस्था खेलों के लिए हो या शासन की। यह तुलना केवल इस परिप्रेक्ष्य में की जा रही है कि एक ही समय पर अपने

इतिहास का एक नया अध्याय शुरू करने वाले समान–सी आबादी वाले दो पड़ोसी देश खेलों में उपलब्धि के सन्दर्भ में आज दो अलग–अलग मुकामों पर खड़े दिखाई देते हैं। इस कड़वी सच्चाई के मद्देनजर कि हम तो 'कहीं पहुँचे ही नहीं', वाकई उपयुक्त होगा कि हम अपने अन्दर झाँकें।

मैं साम्यवादी तन्त्र बनाम पूँजीवादी लोकतन्त्र के तर्क को बहस के बाहर रखने के लिए एक साधारण सा तर्क प्रस्तुत करना चाहूँगा। मेरा कहना है कि खेलों में साम्यवादी व्यवस्था की भूमिका से पूँजीवादी लोकतन्त्रों की सफलता की व्याख्या नहीं हो सकती। जिन 125 देशों ने कम से कम एक पदक जीता है उनमें भारत सबसे पीछे है।[4] यानी समाजवादी लोकतान्त्रिक गणराज्य भारत के ऊपर नाना प्रकार के देश हैं जिनमें कोई साम्यवादी–व्यवस्था का है, तो कोई पूँजीवादी–व्यवस्था का, कोई धर्मतन्त्रीय है तो कोई निरंकुश तन्त्र का, और कोई है राजशाही भी – यानी हमसे ऊपर हर अन्य व्यवस्था का देश है। इससे स्पष्ट है कि भारत बनाम चीन की बहस को दोनों देशों में प्रचलित शासनतन्त्र के चश्मे से नहीं देखा जाना चाहिए।

अन्तर्राष्ट्रीय खेल–मैदान में भारत की असफलता पर कई व्याख्याएँ प्रस्तुत की गई हैं, ढेरों सिद्धान्त झाड़े गए हैं। 2008 में संयुक्त राज्य अमेरिका के ड्यूक विश्वविद्यालय के दो विद्वानों ने एक शोध–पत्र[5] में लिखा था, ''तुर्की ने, जिसकी आबादी भारत की आबादी के दसवें हिस्से से भी

कम है, 2004 के ओलिम्पिक्स में उसी भारत के मुकाबले 10 गुना पदक जीते थे; भारत की आबादी के 6 प्रतिशत जितनी आबादी वाले थाइलैण्ड ने भी 8 गुना पदक तो जुटा ही लिए थे।'' अपने उस पर्चे में इन दो विद्वानों ने दलील दी कि इस सन्दर्भ में 'सामाजिक गतिशीलता' का पहलू किसी देश की सफलता का एक कारक है। वैसे वे यह भी जोड़ते चलते हैं कि क्यूबा, इथियोपिया, कजाखिस्तान, केन्या और उज्बेकिस्तान ऐसे राष्ट्र नहीं हैं जो अपनी ऊँची औसत आय के लिए जाने जाते हैं, फिर भी भारत की तुलना में उन्होंने कहीं अधिक पदक बटोरे हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि खेलों में भारत के इस निराशाजनक प्रदर्शन के लिए जिम्मेदार बहुतेरे कारकों में कुछ तो सच्चाई है। मसलन –

- लोगों की गरीबी (कुछ अनुमानों के मुताबिक हमारी 80 प्रतिशत आबादी ग़रीब है)।[6]
- कुपोषण (कुपोषण में भारत दुनिया का दूसरे नम्बर का देश है)।[7]
- बुनियादी ढाँचे के प्रति हमारी घोर लापरवाही (ओलम्पिक में एकमात्र व्यक्तिगत स्वर्ण पदक विजेता अभिनव बिन्द्रा के पिता द्वारा अभ्यास के लिए एक निजी शूटिंग रेंज बनवाया जाना हमारी खस्ताहाल सार्वजनिक सुविधाओं के बारे में बहुत कुछ बोलता है)।[8]
- प्रायोजकों की कमी (भारतीय उड़नपरी पी.टी. ऊषा की एथलेटिक्स अकादमी की शुरुआत कंगाली की हालत में हुई और आज भी अपनी इस अकादमी को चलाए रखने के लिए उन्हें ढेरों पापड़ बेलने पड़ते हैं)।[9]
- राजनैतिक भ्रष्टाचार (कॉमनवेल्थ खेल घोटाला[10]) और संस्थागत बिखराव (हमारे हॉकी संगठनों की लम्बे दौर से चली आ रही अन्दरूनी कलह के चलते आई.एच.एफ. द्वारा चैम्पियनशिप ट्रॉफी हॉकी टूर्नामेण्ट निरस्त कर दिया जाना)।[11]

  क्रिकेट का दबदबा (हम एक–दिवसीय क्रिकेट में वर्तमान विश्व चैम्पियन हैं), और
- हमारी जीवन शैली और संस्कृति से जुड़े अन्य कारक (हमारा खान–पान वसा–समृद्ध है और जब हमारे खिलाड़ी ही फिटनेस के लिहाज से कमजोर माने जाते हैं तो आम आदमी की तो बात ही क्या करें)।

हाँ, एक कारक जरूर ऐसा है जिसे अधिकांश विश्लेषक गिनती में लाने से चूक जाया करते हैं, और वह है हमारी शिक्षा की औपचारिक व्यवस्था में 'खेलों' का गम्भीर अभाव। इस लेख में मैं खेलों या खेलों की कमी के इसी पहलू को रेखांकित करना चाहूँगा।

खेलों में हमारी कमतरी की जड़ इस बात में है कि हमारे यहाँ स्कूली शिक्षा की ठेठ शुरुआत में खेलकूद को जरूरी प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। नतीजतन, हमारे यहाँ एक खेलप्रेमी समाज की नींव ही ढंग से नहीं रखी जाती।

यह सही है कि देश में ऐसे कई स्कूल हैं जो खेलों पर ध्यान देते हैं और अपनी शैक्षिक उपलब्धियों तथा खेलकूद की उपलब्धियों के बीच एक सन्तुलन बैठाने की मशक्कत में लगे रहते हैं। लेकिन नीति के स्तर पर इस सन्दर्भ में 'शारीरिक शिक्षा' पर सप्ताह में एक निर्धारित कालखण्ड के अलावा खास कुछ और नहीं है – और अधिकांश छात्रों के लिए यह अनुभव भी खेलकूद से मिलने वाला आनन्द होने के बजाय मिलिटरी में करवाई जाने वाली उबाऊ कवायद जैसा होता है। स्कूलों की शारीरिक शिक्षा में प्रार्थना सभा सहित सभी प्रकार की औपचारिक और नियोजित शारीरिक गतिविधियाँ होती हैं। दूसरी ओर खेलों का सम्बन्ध प्रतियोगी क्रीड़ाओं और शारीरिक चपलता पर आधारित दीगर गतिविधियों से अधिक जुड़ता है, जिनमें एक कौशल दूसरे के मुकाबिल होता है, और अन्ततः एक–दूजे से होड़ के चलते प्रतिभागियों का सवश्रेष्ठ प्रदर्शन उभरकर आता है।

इस लेख में ध्यान शिक्षा व्यवस्था में खेलों की भूमिका और इस बात पर केन्द्रित है कि कैसे भारत इस क्षेत्र में कुछ खास नहीं कर पाया है। अब चूँकि खेलों को शारीरिक शिक्षा की छतरी के तले रखा गया है, सो शारीरिक शिक्षा को भी हम पूरी बहस के दायरे में लेंगे। यह तो सामान्य ज्ञान की बात है कि शारीरिक शिक्षा के कालखण्ड में वही सब होता है जो हमारे स्कूलों के शारीरिक शिक्षा मास्टर तय करते हैं और यहीं बीमारी की जड़ है। हमारे

शारीरिक शिक्षा शिक्षक अपनी नौकरी उस सर्टीफिकेट (शारीरिक शिक्षा में डिप्लोमा/डिग्री) के आधार पर पाते हैं जो अगर ठीक उन्हीं नहीं तो वैसी ही बीमारियों का शिकार है जिनसे हमारे देश के अन्य शिक्षक–प्रशिक्षण कार्यक्रम भी ग्रस्त हैं जो 21वीं सदी की जरूरतों से वाकिफ ही नहीं हैं। नतीजतन, यही सब रुग्णता हमारे स्कूली शारीरिक शिक्षा शिक्षकों की गतिविधियों में झलकती है।

हाथ में छड़ी लिए यह शारीरिक शिक्षा शिक्षक ही है जो छात्रों की वक्त की पाबन्दी पर नजर रखता है, स्कूल यूनिफॉर्म से सम्बन्धित नियमों का ध्यान रखता है, असेम्बली के समय छात्रों का एक सीधी लाइन में खड़े रहने पर, तमाम स्कूली जलसों के दौरान 'सावधान', 'विश्राम' आदि की मुद्राओं पर और छात्रों द्वारा स्कूल में अनुशासन बनाए रखने पर कड़ी नजर रखता है। सो स्कूल की चारदीवारी के भीतर छात्रों के लिए उनका शारीरिक शिक्षा शिक्षक ही सबसे डरावना जीव होता है। छात्रों के मन में मौजूद यह छवि उस आदर्श छवि से एकदम उलट है जो एक शारीरिक शिक्षा शिक्षक की होनी चाहिए। हरदम उन्हें श्रेष्ठता पाने के लिए प्रेरित करते रहने वाला, हर पल उनसे 'हदों को परे धकेलने' की गुहार लगाने वाला, निर्भीक खिलाड़ियों की प्रेरणास्पद कहानियाँ सुनाकर हमेशा उनकी कुछ यूँ हौसला–अफजाई करने वाला व्यक्ति कि वे मानव शरीर की अथाह क्षमताओं से रूबरू हो पाएँ, और वह व्यक्ति जिसकी ओर वे हर बार अगाध श्रद्धा के भाव से देखें![12]

देश में ऐसे संगठनों की कोई कमी नहीं जिनका काम ही स्कूलों में शारीरिक शिक्षा या, और भी विशिष्ट रूप से, देश में खेलकूद से सम्बद्ध है। लेकिन उनके रवैये में किसी भी तरह की प्रगतिशीलता नहीं है, उनके दृष्टिकोण में कुछ भी नया नहीं होता और इसके चलते वे अज्ञात अवस्था में ही रहते हैं। 'अखिल भारतीय शारीरिक शिक्षा परिषद'[13] देश में शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रमों पर नजर रखने के लिए ऐसी ही नामजद संस्था है, जिसकी नियुक्ति भारतीय संसद के वरिष्ठ सदन ने की है, लेकिन इसके बारे में हमें बहुत कम जानकारी है। विकासशील विचार से रहित

खेलों में हमारी कमतरी की जड़ इस बात में है कि हमारे यहाँ स्कूली शिक्षा की ठेठ शुरुआत में खेलकूद को जरूरी प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। नतीजतन, हमारे यहाँ एक खेल प्रेमी समाज की नींव ही ढंग से नहीं रखी जाती।

दस्तावेज के उदाहरण के रूप में 'अध्यापक शिक्षण के लिए राष्ट्रीय परिषद' (नैशनल काउंसिल फॉर टीचर एजुकेशन) के दस्तावेज 'अध्यापकों के गुणवत्तापूर्ण शिक्षण हेतु एक रूपरेखा'[14] की मिसाल रखी जा सकती है जिसमें एक अध्याय 'शारीरिक शिक्षा के लिए अध्यापकों का शिक्षण' को समर्पित है। हमें इसमें भी कोई विकासशील विचार नहीं मिलते। प्रगतिशील विचारों के अभाव के अलावा कई और कमियाँ भी इन दस्तावेजों में देखने को मिलती हैं। एक भी दस्तावेज न तो शारीरिक शिक्षा के अन्तर्गत खेलों पर अपेक्षित ध्यान देता है और न ही 'शिक्षा' की समूची व्यवस्था में शारीरिक शिक्षा के प्रति कोई समग्र नजरिया पेश करते हुआ दिखता है।

कोई 25 बरस पहले, 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति' हेतु तैयारियों के सन्दर्भ में 31 मार्च, 1986 को राष्ट्रीय प्राथमिक शिक्षा सम्मेलन में बोलते हुए तत्कालीन प्रधानमन्त्री स्व. श्री राजीव गाँधी ने घोषणा की थी – ''सिर्फ किताबी ज्ञान से चरित्र नहीं बनता। चरित्र तो विभिन्न नियमित गतिविधियों से बनता है, खेलों के द्वारा बनता है, किसी टीम में या अकेले स्वयं खेलने से बनता है।''

लेकिन शिक्षा में खेलों पर हमारा आग्रह अगर कहीं रहा भी है तो केवल 'भाषणों' में ही रहा है; यहाँ तक कि यह 'कागज' तक भी नहीं पहुँचा है। कुछ विचार अगर 'कागज' (यानी दस्तावेज) तक पहुँचे भी तो वे ऐसी ठोस, एकीकृत योजना के रूप में नहीं थे जिसे अमली जामा पहनाया जा सके। सब स्कूल वार्षिक खेल दिवस मनाने की नीति का पालन करते हैं, लेकिन एक अहम कड़ी तो नदारद ही है – उसका जुड़ाव और सम्बन्ध कक्षा के भीतर और बाहर होने वाले ज्ञान के साथ नहीं है। यदि होता तो खेलों के प्रति एक सकारात्मक रवैया बन सकता था। इसी प्रकार परीक्षाओं के दौरान खेल के सब कालखण्ड निरस्त कर दिया जाना एक ऐसी मानसिकता की ओर इशारा करता है जो आदिम भी है और यकीनी तौर पर उन एकदम हालिया अनुसन्धानों[15] से बेखबर भी, जिनके मुताबिक नियमित शारीरिक शिक्षा और शैक्षिक उपलब्धि के बीच एक सकारात्मक सह–सम्बन्ध है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986[16] 'खेल एवं शारीरिक शिक्षा' शीर्षक के अपने खण्ड में किसी भी शैक्षिक प्रक्रिया में खेलों और शारीरिक शिक्षा के महत्व पर जोर देती है। वह इसे प्रदर्शन–मूल्यांकन की समग्र प्रक्रिया का एक घटक बनाने का सुझाव देती है और शिक्षा के इमारती ढाँचे के एक अदद हिस्से के तौर पर शारीरिक शिक्षा के राष्ट्रव्यापी ढाँचे का आह्वान भी करती है। खेलों में प्रतिभा रखने वाले छात्रों

को प्रोत्साहन देने की जरूरत की बात भी इसमें की गई है। लेकिन, छात्रों द्वारा श्रेष्ठता के लिए प्रयास करने और खेलों को एक धुन, एक जज्बा बनाने पर ध्यान देने की बात गायब है। यहाँ तक कि शारीरिक शिक्षा पर एक अलग उप–समूह वाले एन.सी.एफ. 2005 से भी आशाएँ पूरी नहीं होतीं; इसका पूरा ध्यान भी स्वास्थ्य सम्बन्धी शारीरिक शिक्षा गतिविधियों पर है, न कि असल खेलकूद पर। यदि एन.सी. एफ. जैसा प्रगतिशील दस्तावेज भी मुद्दे की बात न करे तो हमें यह मान लेना चाहिए कि हमने इस सच्चाई पर गौर ही नहीं किया कि अन्तर्राष्ट्रीय खेलों में फिसड्डी बने रहने से देश और देश के लोगों की छवि को ठेस पहुँचती है।

देश में शिक्षा के भविष्य हेतु उपाय सुझाने वाले हालिया आधिकारिक दस्तावेजों में से एक, शिक्षा का अधिकार अधिनियम 2009 पर सर्व शिक्षा अभियान की रिपोर्ट[17] भी पूर्ववर्ती दस्तावेजों द्वारा खेलों के प्रति दर्शाई गई अनभिज्ञता की परिपाटी का ही पालन करती है; इसमें भी खेल–सम्बन्धी पहलुओं पर कोई बल नहीं दिया गया है। रिपोर्ट आज हमारी व्यवस्था द्वारा अपनाए जा रहे विषय–आधारित तरीके की अड़चनों का जिक्र छेड़ती है, और यह भी बताती है कि इस रवैये के चलते समाज के महत्वपूर्ण मसलों पर चेतना जगाना किस कदर टेढ़ी खीर हो चला है। लेकिन अपनी इस बात का खुलासा करने के लिए वह खेलों का सहारा उदाहरण के तौर पर भी नहीं लेती। रिपोर्ट 'व्यवस्थागत बाधाएँ' शीर्षक के अन्तर्गत पाठ्यचर्या और मूल्यांकन पर अपने अध्याय में विभिन्न पहलुओं का जिक्र करती है। जैसे 'सभी विषयों में और सभी स्तरों पर पर्यावरण सम्बन्धी ज्ञान और कार्य सम्बन्धी प्रवृत्ति का प्रसार', 'विभिन्न विषयों में स्कूली ज्ञान और बच्चों के रोजमर्रा के अनुभवों के बीच की कड़ियाँ', 'एक स्तर से अगले स्तर तक जाने के दौरान बच्चों के विकास और उनकी निरन्तरता के प्रासंगिक चरणों हेतु प्रसंगों और विषयों की उपयुक्तता', 'अलग–अलग अनुशासनिक क्षेत्रों के अन्तर्गत आने वाले विभिन्न स्कूली विषयों हेतु प्रकरणों के बीच की अन्तर–अनुशासनिक एवं विषयपरक कड़ियाँ', और तो और, 'पाठ्यचर्या के हर पहलू में कलाओं और भारतीय शिल्पकला की विरासत को गूँथते हुए सुरुचि सम्पन्न संवेदनशीलता का विकास' जैसे कई पहलुओं का हवाला यह रिपोर्ट देती है, पर शारीरिक शिक्षा से जुड़े किसी भी पहलू का एकबारगी जिक्र भी नहीं है, खेलों की तो बात ही छोड़िए।

कोई कह सकता है कि जब खुद शिक्षा के क्षेत्र की ही अपनी कई समस्याएँ हों, ऐसे में शिक्षा के दायरे में काम करने वाले संस्थानों, संगठनों से यह उम्मीद करना कि वे खेलों या शारीरिक शिक्षा पर प्रगतिशील दस्तावेज भी बनाएँ, उनके साथ सरासर ज्यादती होगी। लेकिन हमारे देश में खेलों के प्रबन्धन और उसके प्रोत्साहन का काम जिन संगठनों के खाते है, उन पर जरा एक नजर डालें, तो आप तुरन्त समझ जाएँगे कि न सिर्फ उनकी सोच स्थिर और एक ही जगह टिकी हुई है, उनमें खेलों पर ध्यान केन्द्रित करने का माद्दा भी नहीं है जिसकी देश को आज सख्त जरूरत है।

उदाहरण के लिए, युवा मामलों और खेल मन्त्रालय की राष्ट्रीय युवा नीति 2003[18] का उद्देश्य कानून का पालन करने वाले ऐसे नागरिक तैयार करने का लगता है, जो संविधान में निहित आदर्शों के प्रति वफादार बने रहें, जो हमारे इतिहास और तहजीब के प्रति श्रद्धा भाव रखते हुए समाज–सेवा में अपना योगदान देने को तत्पर रहें – कुल मिलाकर आज्ञापरायण, शान्ति बनाए रखने वाली जनता हो। वैसे तो इस उद्देश्य में कुछ भी गलत नहीं है, लेकिन जब यह बात उस मन्त्रालय से आए जिसका काम युवा मामलों और खेलों के लिए कुछ करना है, तब यह बात दुखी कर देने वाली लगती है कि शब्द 'खेल' एक बार भी न तो इसकी उद्देश्य–सूची[19] में और न ही इसके प्रमुख सरोकारों में आता है! 'खेल' नाम का कर्म 'खेल एवं युवा मामले' मन्त्रालय के खेल विभाग के साथ नत्थी हो जाता है और युवा मामलों की नीति से उसका कुछ लेन–देन ही नहीं रह जाता!! यदि युवा मामलों एवं खेल मन्त्रालय के भीतर बने दो विभागों के बीच ही कोई एका नहीं है तो हम सोच सकते हैं कि एक ओर मानव संसाधन विकास मन्त्रालय के तहत शिक्षा विभाग और उधर खेल विभाग के बीच की स्थिति

क्या होगी जबकि मेरे हिसाब से देश को पिटे–पिटाए रास्ते से निकालने के लिए यह तालमेल अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

राष्ट्रीय खेल नीति 2001[20] में खेलों को शिक्षा से जोड़ने के मुद्दे पर बस एक छोटा–सा अनुच्छेद है; न तो आगे चलकर इसे कोई विस्तार दिया गया है और न ही कुछ सार्थक विचार प्रस्तुत किए गए हैं। हाँ, चन्द ख्वाहिशें जरूर दर्ज हैं। राष्ट्रीय खेल नीति 2007[21] कुछ अच्छे सुझाव जरूर देती है, लेकिन अब भी यह बस एक प्रारम्भिक दस्तावेज की शक्ल में ही है जो कुल मिलाकर हमारे देश में की जा रही खेलों की लगातार अनदेखी की ओर ही इशारा करता है। जनवरी 2011 में भारत सरकार द्वारा 'राष्ट्रीय खेल विकास संहिता 2011 (एन.एस.सी.आई. 2011)'[22] अधिसूचित होकर तुरन्त प्रभाव में आई। आप अगर इस दो सौ से अधिक पृष्ठों वाले दस्तावेज को पढ़ें तो तुरन्त समझ जाएँगे कि इस दस्तावेज का उद्देश्य, शुद्ध रूप से खेलों की हौसला–अफजाई करना तो है ही नहीं, इसमें तो बस खेलों को नियन्त्रित करने भर की मशक्कत है। इसका प्रयोजन बस यह सुनिश्चित करना है कि विभिन्न राष्ट्रीय खेल संघ[23], भारतीय खेल प्राधिकरण (एस.ए.आई.) और सम्बद्ध सरकारी एजेंसियाँ कहीं एक–दूसरे के आड़े न आएँ। बेशक, विभिन्न एजेंसियों के क्रियाकलापों को परस्पर–संगति में लाना और उनके उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उन्हें प्रेरित करना भी जरूरी है और इससे खेलों में देश की छवि भी बेहतर होगी, लेकिन आज 'नीचे–से–ऊपर' वाले व्यावहारिक दृष्टिकोण की बहुत जरूरत है। 'पंचायत युवा क्रीड़ा और खेल अभियान'[24] सरीखी पहलकदमियाँ सही दिशा में उठे कदम हैं लेकिन इसकी सफलता के लिए यह देखते रहना भी जरूरी होगा कि कौन–कौन से कार्यक्रम बनाए जा रहे हैं और उनका क्रियान्वयन किस तरह हो रहा है। इन तमाम पहलकदमियों का अन्तिम लक्ष्य ग्राम स्तर पर एक खेल संस्कृति की पैठ बनाना होना चाहिए और इसकी शुरुआत ग्राम स्कूल से होनी चाहिए।

आज एक ठीक–ठाक से बुनियादी खेल ढाँचे तक पहुँच बनाना बहुत आवश्यक है। यह इसलिए और भी अधिक आवश्यक है क्योंकि अभी तक हम खेलों के लिए मूलभूत स्वास्थ्य–विज्ञान की स्थापना से भी बहुत दूर हैं। राष्ट्रीय खेल नीति 2007 के मसौदे के मुताबिक आज हमारे देश में 35 साल से कम उम्र की करीब 77 करोड़ की जनसंख्या में से केवल 5 करोड़ युवाओं को ही खेलकूद की संगठित सेवाएँ मुहैया हैं। इससे स्पष्ट है कि नीतियों को लागू करने में हम कितना कमजोर हैं। 1984 में आई पहली राष्ट्रीय खेल नीति की हुंकार ने तभी हमें चेता दिया था कि हमारी खेल–अधोसंरचना में सुधार की भीषण जरूरत है, और तमाम पंच–वर्षीय योजनाओं से इसे लगातार सम्बल भी मिलता रहा, लेकिन इस सबके बावजूद आज भी वही बदतर हालात कायम हैं।

राष्ट्रीय खेल नीति 2007 में, शैक्षिक सर्वेक्षणों के आँकड़ों पर आधारित कुछ दिलचस्प टिप्पणियाँ इस प्रकार हैं – ''दरअसल 1978 से लेकर 2002 के बीच खेल के मैदानों की उपलब्धता में, प्राथमिक स्कूलों के सन्दर्भ में 7 प्रतिशत, उच्चतर प्राथमिक स्कूलों के मामले में 9 प्रतिशत और माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक स्कूलों में 5 प्रतिशत की कमी आई है। अन्य खेल–सम्बन्धी सुविधाओं, जैसे कि इन्डोर हॉल, व्यायामशालाओं और उपकरणों की उपलब्धता तो बुनियादी स्तर के खेल के खुले मैदानों की उपलब्धता से भी कम है।" यहाँ तक कि हमारे शहरों में कुकुरमुत्तों की तरह फल–फूल रहे छोटे स्कूलों पर एक उड़ती नजर से ही हमें इन स्कूलों द्वारा खेल और खेलों से जुड़ी किसी भी प्रकार की गतिविधि की अनदेखी का पता चल जाता है। अब इस तरह के स्कूल भला कर भी क्या सकते हैं – इनमें से ज्यादातर तो अपेक्षाकृत थोड़े बड़े मकानों में ही चलाए जा रहे हैं। वहाँ बरामदा तक तो होता नहीं, सो खेल के मैदान की तो जुर्रत ही क्या कि वो वहाँ हो। ऐसे में, हमारी शिक्षा नीति और खेल नीति की युगल टीम बनाना, उन्हें एकीकृत करना, हमारा अगला महत्वपूर्ण कदम होना चाहिए।

कई निजी संस्थानों[25] ने स्कूलों और व्यक्तियों की जरूरतों को पूरा करने के लिए दुकानें खोल ली हैं। यह 'शिक्षा में खेल' की बढ़ती माँग की ओर इशारा करता है। इस तरह के संगठन कुछ और अभिनव बिन्द्रा बना पाने की उम्मीद में हमारे अभिजात–वर्ग के स्कूलों की मदद को आ रहे हैं। लेकिन हमारी आबादी के एक बहुत बड़े हिस्से को बीते जमाने की प्रणालियों के आधार पर बने संसाधनों से ही सन्तुष्ट रहना पड़ेगा। ऐसे में ड्यूक विश्वविद्यालय के विद्वानों[26] द्वारा बताई गई समस्या तो वहीं–की–वहीं, वैसी–की–वैसी अनछुई ही रह जाएगी – कि सौ करोड़ से ज्यादा की आबादी में युवाओं का अच्छा–खासा प्रतिशत होने के बावजूद, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का खेल प्रदर्शन करने का माद्दा रखने वाले हमारे युवा संख्या में बहुत थोड़े हैं। इसलिए हमारी खेल–जरूरत न सिर्फ महत्वपूर्ण है, बल्कि तात्कालिक भी है। समय आ गया है कि हमारे सारे राष्ट्रीय खेल संघों (अब तक बासठ) को इस बात के आदेश दिए जाएँ कि वे एक सोची–समझी चरणबद्ध रणनीति के तहत अपने–अपने

खेलों को देश भर में लोकप्रिय बनाएँ और उन्हें आगे बढ़ाएँ।

मेरा आग्रह तो यही होगा कि शिक्षा में खेलों को लेकर हमारा नजरिया क्या है, उस पर हमें नए सिरे से नजर डालनी होगी। हमें खेलों को अपनी शिक्षा में इस तरह रचाना–बसाना होगा कि वे सीखने–सिखाने के अनुभव का एक अभिन्न अंग हों, न कि किसी 'पाठ्येत्तर' गतिविधि की तरह। खेलों के महत्व को राष्ट्रीय चेतना में लेकर आना और फिर युवाओं को श्रेष्ठतम अर्जित करने हेतु प्रेरित करना – यह हमारा राष्ट्रीय मिशन बन जाना चाहिए। इसके लिए भारत को एशियाई खेलों या कॉमनवेल्थ गेम्स या फिर ओलिम्पिक का मेजबान होने तक इन्तजार करने की कतई जरूरत नहीं है। इसकी बजाय हम अपनी पाठ्यचर्या की गतिविधियों में खेल से सम्बद्ध उदाहरण और विषय शामिल करके शुरुआत कर सकते हैं। यह सभी स्तरों पर पाठ्यक्रम का महत्वपूर्ण हिस्सा बन जाना चाहिए। इस वक्त तो हम इस मामले में एक कोरी स्लेट की तरह हैं – इसकी एक सरल पड़ताल तो यह देखकर ही की जा सकती है कि हमारी पाठ्यपुस्तकों में कितने प्रसिद्ध खिलाड़ियों का कितना और क्या जिक्र आता है!

एक राष्ट्र की हैसियत से, अगर हम अपनी क्षमताओं से न्याय करने वाली कोई खेल उपलब्धि पाना चाहते हैं तो हमें नीतिगत दखलंदाजियों के साथ–साथ ढेरों छोटी–छोटी चीजें भी करनी होंगी। व्यक्तिगत स्तर पर हमारे अध्यापक खेल के विषयों को अन्य विषयों की ही तरह खेलों को भी वही सम्मान और गरिमा देकर ऐन मुख्यधारा में ला सकते हैं। गणित के शिक्षक द्वारा उसेन बोल्ट के आँकड़ों की मदद से दशमलव का पाठ पढ़ाया जाना या समाजविज्ञान के अध्यापक द्वारा देश के उत्तर–पूर्व से हमारी एक अहम कड़ी के रूप में भारोत्तोलक कुंजूरानी देवी का उदाहरण देना या फिर भौतिकी के एक शिक्षक द्वारा गुरुत्व के बल से पोल वॉल्ट खिलाड़ी बुब्का का नाम जोड़ना कुछ उदाहरण हैं कि किस प्रकार प्राथमिक कक्षाओं में खेल–संस्कृति विकसित की जा सकती है। इस प्रकार के मिशनरी जज्बे के दम पर ही हम अपनी ऊँघ से निकल पाएँगे और चीन के फैक्टरीनुमा ढाँचे को लागू किए बिना यश की उस चोटी की ओर अग्रसर हो पाएँगे जिसे वह देश फतह कर चुका है।

यदि हम 'गूगल स्कॉलर' में 'स्पोर्टस् इन एजुकेशन' सर्च करें तो इसके पहले और पाँचवें पृष्ठ पर दिए गए आठ लिंक में से पाँच लिंक चीन से निकलने वाली पत्रिकाओं के मिलते हैं। खेलों के क्षेत्र में चीन ने जो कुछ किया है, उस पर राष्ट्रीय खेल नीति 2007[27] भी अच्छा–खासा वक्त बिताती है। हालाँकि यहाँ 'स्वर्ण पदक लक्ष्य' की खातिर चीन द्वारा अपनाए गए तरीकों पर बातचीत करना ठीक न होगा, लेकिन हकीकत तो यही है कि चीन आज एक खेल महाशक्ति है, और भारत एक फिसड्डी; हाँ कुछ लोग जरूर भारत को 'सुप्त महादेश' कहते हैं। लेख के अन्त में चीन से तुलना का मकसद हमारे फिसड्डीपन को रेखांकित करना भी है और उसी साँस में, खुद को अपने देश की क्षमताओं के बारे में याद दिलाना भी है। मैं जानता हूँ कि भारत एक सोया हुआ महादेश है; इसीलिए यह जरूरी है कि हम सही चीजें करें, अभी, ठीक अभी, ताकि युवा हिन्दुस्तानियों के अन्दर जीवट भरा इनसानी जज्बा और खेलों का रोमांच जगे और वे सक्षम बन भारत को एक 'खेल महाशक्ति' बनाने के उद्यम में लग जाएँ।

यह निर्विवाद है कि स्कूलों में ही एक जोरदार शुरुआत करने की जरूरत है। स्कूलों में नियोजित शारीरिक गतिविधि के फायदे सिर्फ सेहत तक ही सीमित नहीं रहते, बल्कि शैक्षिक उपलब्धियों में भी उनका सकारात्मक योगदान जुड़ता है – यह सच्चाई खेलों को शिक्षा से जोड़ने वाले रास्ते में आने वाली तमाम बाधाओं को दूर करने में सहायक होनी चाहिए।

सन्दर्भ:

1. T.N.Srinivasan , Samuel C.Park Jr. , Professor of Economics, Yale University. China and India: Growth and Poverty 1980-2000 http://siteresources.worldbank.org/INTPGI/Resources/12404_TNSrinivsan-Paper2+Tables.pdf
2. http://www.olympic.org/ (countries tab)
3. Wikipedia – countries at the Olympics ; http://en.wikipedia.org/wiki/China_at_the_Olympics
4. http://users.skynet.be/hermandw/olymp/reloly.html
5. Anirudh Krishna and Eric Haglund. Why Do Some Countries Win More Olympic Medals? E.P.W., July 2008.
6. http://www.policymic.com/articles/how-poor-is-too-poor-in-India
7. http://web.worldbank.org/WBSITE/EXTERNAL/COUNTRIES/SOUTHASIAEXT/0,,contentMDK:20916955~ pagePK:146736~piPK:146830~theSitePK:223547,00.html
8. http://www.preservearticles.com/106117788/short-biography-of-abhinav-bindra-the-olympic-gold-

medalist.html

9. http://www.bywaystar.com/2011/06/track-two-to-the-olympics/
10. http://ibnlive.in.com/news/cbi-arrests-suresh-kalmadi-in-cwg-scam-case/150134-3.html
11. http://www.fih.ch/en/news
12. इस लेख में शारीरिक शिक्षा शिक्षक की जो तस्वीर खींची गई है वह एक तो स्कूली दिनों में हुए लेखक के अपने अनुभवों और दूसरे, स्कूल से निकलने के कोई दो दशक बाद तक विभिन्न स्कूलों में लेखक द्वारा देखे गए नजारों पर आधारित है।
13. http://www.aicpe.ac.in/news.htm
14. http://www.ncte-india.org/pub/curr/curr.htm#61
15. Katz DL, Cushman D, Reynolds J, Njike V, Treu JA, Walker J, et al. Putting Physical Activity Where it Fits in the School Day : Preliminary Results of the ABC (Activity Bursts in the Classroom) for Fitness Programme. Prev Chronic Dis 2010 ; 7(4). http://www.cdc.gov/pcd/issues/2010jul/09/_0176.htm. Accesses 09-09-11

    Susan A. Carlson, Janet E. Fulton, Sarah M. Lee, Michele Maynard, David R. Brown, Harold W.Kohl,III William H. Dietz. Physical Education and Academic Achievement in Elementary School: Data from the Early Childhood Longitudinal Study. http://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC 2377002/Am J Public Health. 2008 April; 98(4): 721-727. doi: 10.2105/AJPH.2007.117176

    Joseph E. Donnelly, Jerry L. Greene, Cheryl A. Gibson, Bryan K. Smith, Richard A Washburn, Debra K. Sullivan, Katrina DuBose, Matthew S, Mayo, Kristin H Schmelzle, Joseph J. Ryan, Dennis J. Jacobsen, Shannon L. Williams. Physical Activity Across the Curriculum (P.A.A.C.): A Randomized Controlled Trial To Promote Physical Activity and Diminish Overweight and Obesity in Eelementary School Children.

    http://www.ncbi.nlm.nih.gov/pmc/articles/PMC2766439/ Prev.Med. Author manuscript; available in PMC 2010 October 1. Published in final edited form as : Prev.Med. 2009 October; 49(4): 336-341.

    Published online 2009 August 6.
16. एन.पी.ई. (राष्ट्रीय शिक्षा नीति), 1986
17. 'शिक्षा का अधिकार, सर्व शिक्षा अभियान' पर अनिल बोर्डिया समिति द्वारा प्रस्तुत अन्तिम रपट।

    http://ssa.nic.in/quality-of-education/rte-reporting-by-anil-bordia-committee
18. http://www.yas.nic.in/index2.asp?linkid=47&slid=70&sublinkid=32&langid=1
19. http://www.yas.nic.in/index2.asp?linkid=67&slid=86&sublinkid=188&langid=1
20. http://www.yas.nic.in/index3.asp?sslid=91&subsublinkid=66&langid=1
21. http://www.yas.nic.in/writereaddata/mainlinkfile/File371.pdf
22. http://www.yas.nic.in/writereaddata/mainlinkFile/File918.pdf
23. खेल एवं युवा मामले मन्त्रालय की वेबसाइट http://yas.nic.in/writereaddata/linkimages/8940703031.htm पर 62 राष्ट्रीय खेल संघ दर्ज हैं।
24. http://pykka.gov.in/
25. http://www.sportseed.in/
26. Anirudh Krishna and Eric Haglund. Why Do Some Countries Win More Olympic Medals? E.P.W., July 2008.
27. Pages 13-15; http://www.yas.nic.in/writereaddata/mainlinkfile/File371.pdf

ऋषिकेश *अज़ीम प्रेमजी इंस्टिट्यूट फॉर असेसमेण्ट एण्ड अक्रेडिटेशन की डाइट क्वालिटी इकाई के प्रमुख हैं। खेलों के पैरोकार ऋषिकेश, जे.एन.यू. के स्नातकोत्तर हैं। शैक्षिक शोधकर्ता बनने से पहले वे स्कूलों में इतिहास की कार्यशालाएँ आयोजित किया करते थे। फाउण्डेशन की तमाम अकादमिक और शैक्षिक गतिविधियों के जरिए वे इस विषय में अपनी दिलचस्पी निरन्तर बनाए रखते हैं। सम्पर्क करने के लिए उनका ई–मेल है rishikesh@azimpremjifoundation.org*